भक्त हृदय के उद्‌गार..

कौन हूँ मैं ओ राम मेरे..

कौन हूँ मैं ओ राम मेरे,
जो 'मैं' को चढ़ाने आई हूँ।

कौन हूँ मैं जिसे ले करके,
अज दर पे मिटाने आई हूँ।।

'मैं' ही महा अरि मेरा,
मन बुद्धि तन मेरे संग नहीं।

किसको कहूँ है साथी मेरा,
जब तू ही मेरे संग नहीं।।

गर संग में होता तू मेरे,
'मै' मेरी अब तक मिट जाती।

गर तू चाहता अरे एक पल ही,
अब लग दर्शन क्या ना पाती।।

करुणानिधे करुणा करके,
एक करुणा बुँदिया दे जावो।

बिन तेरे कहे ये 'मैं' ना मिटे,
अब मरण बुँदिया दे जावो।।

कौन हूँ मैं, कौन हूँ मैं, कौन हूँ मैं.....

- परम पूज्य माँ

अनुक्रमणिका

१. *भक्त हृदय के उद्‌गार..*

३. *'अपने आपको' देने का अर्थ है..*
आप, अपने आप में से अपना आप काट कर देते हैं!
श्रीमती पम्मी महता

७. *लीन होये ही जान सके,*
बस एको रे वह ही है!
मुण्डकोपनिषद्, प्रथम मुण्डक - २/१/१

१२. *आत्म-समर्पण का महायज्ञ*
श्री सी.एल. आनन्द

१६. *एक पत्र, पूज्य माँ के नाम..*
डॉ. जे.के. महता

१८. *'जब धर्म की ग्लानि होती है..*
और अधर्म की वृद्धि होती है,
तब तब मैं प्रकट होता हूँ!'
अर्पणा प्रकाशन 'श्रीमद्‌भगवद्‌गीता - भगवद् बाँसुरी में जीवन धुन' में से..
श्रीमद्‌भगवद्‌गीता ४/७,८

२४. *भगवान जन्म*
परम पूज्य माँ से 'पिताजी' के प्रश्नोत्तर

३०. *स्वर्गदायिनी अग्न-विद्या..*
(नचिकेत द्वारा त्रै-अग्न ज्ञान की याचना)
'कठोपनिषद्' पर आधारित

३६. *अर्पणा समाचार पत्र*

४०. *श्रीमती सूज़न गैंद..*
दुर्लभ होती हैं ऐसी आत्माएं..

❖ ❖ ❖

सम्पादक की ओर से

गद्य में प्रस्तुत सभी लेख साधकों के प्रश्नों के उत्तर में परम पूज्य माँ द्वारा प्राप्त सत्संगों पर आधारित हैं और संकलन-कर्ता की निजी समझ के अनुकूल हैं। काव्य की पंक्तियाँ पूज्य माँ के मुखारविंद से प्रवाहित दिव्य प्रवाह का अंश हैं; जिसे सुश्री छोटे माँ ने लेखनी बद्ध किया है। अपनी पूर्ण सामर्थ्य के अनुसार उसे ज्यों का त्यों प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। प्रस्तुति में किसी भूल के लिये हम क्षमा प्रार्थी हैं।

सम्पादक : *पूनम मलिक*
सह सम्पादक : *श्रीमती साधना पाल*

पता : अर्पणा आश्रम, मधुबन, करनाल
१३२ ०३७, हरियाणा, भारत

श्री हरीश्वर दयाल, अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन, करनाल १३२ ०३७ ०१, हरियाणा द्वारा अगस्त २०२० को प्रकाशित तथा सोना प्रिन्टर प्राईवेट लिमिटेड, एफ -८६/१, ओखला इण्डस्ट्रियल एरिया फेज़-I, नई दिल्ली ११० ०२० द्वारा मुद्रित

‘अपने आपको’ देने का अर्थ है..
आप, अपने आप में से अपना आप काट कर देते हैं!

श्रीमती पम्मी महता

भला पूछिये, क्यों आनन्दित हो रही हूँ आज! ज़ाहिर है, परम पूज्य श्री हरि माँ व पूज्य छोटे माँ को घर के बाहर द्वार पर जो खड़े देखा.. उनका वेष तो भिन्न था, मगर मेरा रोम रोम गवाही दे रहा था.. यक़ीनन आप परम पूज्य माँ व पूज्य छोटे माँ हैं!

मैंने द्वार खोला व उन्हें अपने कमरे में ले आई। पूछा, ‘आप माँ व छोटे माँ हैं न?’ आप माँ ने हामी भर दी और मुसकुरा दिये.. देखी-देखी मैं आत्मविभोर हो गई! मन ही मन श्री चरणन् में लोट गई.. मेरे बिन पूछे ही आप माँ ने कहा, “तेरी आँखें ठीक करने आई हूँ।” मैं ठगी सी खड़ी आप दोनो को निहार रही थी..

आप परम पूज्य माँ उठे और आपने मेरी आँखों पर अपनी उंगलियाँ रखी दीं.. और उन्हीं से मेरी आँखें सहलाने लगे.. तभी मेरी जाग खुल गई! मेरी आँखों पर उनके हाथों का कोमल स्पर्श अभी भी मुझे महसूस हो रहा था। बड़ा ही प्यारा एहसास भी हुआ और ख़ुद को धन्य-धन्य महसूस करने लगी!

आप सच ही आये थे। बड़ी ही प्यारी दस्तक थी। जब चेतन अवस्था में आई तो भी आप ही की presence को महसूस कर पा रही थी और पूज्य छोटे माँ को बहुत ही प्यार से देख करी उन्हें गले से लगा लिया.. न जाने मुझे कितनी असीसें दे गये आप इस विध आकर! आपका कोटि कोटि धन्यवाद! आप ही की चरण रज सीस चढ़ा कर धन्य-धन्य महसूस कर रही हूँ।

आप परम पूज्य माँ का जन्मदिन भी है यानि हमारे शुभ दिनों का उत्सव! आपको हे श्री हरि माँ व पूज्य छोटे माँ, बार बार नमस्कार करते हुए कोटि कोटि धन्यवाद करती हूँ व आपको विनम्र नमन देती हूँ।

न जाने मेरे जीवन का कौन सा Chapter (अध्याय) आप खोलने वाले हैं.. आप श्री हरि माँ! जो भी होगा, निश्चय ही बहुत सुन्दर व भावपूर्ण होगा।

आप श्री हरि परम पूज्य माँ को आपके जन्मदिवस पर हम पूर्ण जगती का कोटि कोटि प्रणाम! ..जिनकी पुकार पर आपने इस भारत भूमि को धन्य-धन्य करने के लिए व हमारे उत्थान के लिए यहाँ अवतरित होने का यह जो निर्णय लिया.. उसके लिए आपके मातु-पितु का कोटि कोटि धन्यवाद करती हूँ, जिन्होंने आपको जन्म दिया। पूर्ण जगती गौरवान्वित हुई है।

हम तो बहुत ही भाग्यशाली हैं, जिन्हें आपके दर्शन इतने क़रीब से देखने को मिले व जीवन के मूल्यों का साक्षात् कराया कि जीवन कैसे जिया जाता है.. 'मैं' रहित हो कर निःस्वार्थ भाव से! आप का सगुण वेष ही है, जिसने हमें जीवन जीने का सन्देश दिया.. वह भी अपने क़दमों से चल कर! भारत भूमि सदा आपकी आभारी रहेगी व पूज्य छोटे माँ की भी जिन्होंने आपके जीवन को, आपके द्वारा व्याख्या किये गये शास्त्रों को लेखनीबद्ध किया।

परम पूज्य श्री हरि माँ आपके पूज्य पिता जी का भी बहुत धन्यवाद करती हूँ, जिन्होंने मुझे कहा था, "पम्मी, कभी भी माँ को छोड़ना मत!" सच ही कहा था उन्होंने मुझे और आप माँ ने सच में ही मुझे अपना लिया। जीव में तो ताब नहीं होती, यह सभी कर पाने की.. लेकिन प्रभु कृपा जब कृपापूर्ण हो कर मिलती है तो हृदय आँचल भी बड़ा हो जाता है.. आपकी हर देन जो उसमें समा सके!

बड़ों के आशीर्वादों का कितना महत्व होता है.. धीरे-धीरे आप परम पूज्य माँ ने जनवा दिया.. वाणी से ही नहीं, अपने श्री क़दमों से चल चल कर हमें राह दी.. 'आओ मेरे पीछे पीछे चलते चलो!' कितनी सुन्दर व्याख्या थी। अनुभवी ने दिव्य जीवन प्रसाद देकर हमें चलने की विधि दी। असीम श्रद्धा-भक्ति व आस्था से उसे ग्रहण करने का सबब बन कर आप हमारे लिये यूँ आये, सगुण वेष धारण करके..

हम सदा ऋणी रहेंगे आपके और साथ-साथ विनती करते हैं अतीव विनीत भाव से.. आपकी हृदयग्राही वाणी को जीवन में धारण करी जी पायें, जो आंतर की कालिमा का अंत हो जाये!

आपसे कई बारी सुना, "उत्तर की तरफ चल पड़ो.. दक्षिण स्वतः छूट जायेगा।" कितना सत्य था आपकी वाणी में। यह सोचने की फ़ुरसत ही नहीं दी एक बार भी.. मैं ऐसा क्यों हूँ? मैं वैसा क्यों हूँ? यानि पीछे मुड़-मुड़ कर देखने का अवसर ही नहीं दिया एक बार भी! आप तेजस्वी का तेज व सौंदर्य इतना अद्‌भुतपूर्ण था कि वहाँ से आँख उठती ही नहीं थी। दर्शन करती चलूँ और आपके पाछे-पाछे चलती चलूँ..

अहोभाग्य मेरे, जो आप मुझे यूँ प्रेरित किये रहते हैं। आपका कृपा प्रसाद तो इतना अनमोल व आपके प्यार से ओत-प्रोत है.. ईश्वर करे, जन्म-जन्म यूँ ही आपका साथ मिलता रहे! ईश्वर करे, 'मैं' मैं न रहे! रहे तो बस इक तू ही तू रहे! बस माँ आप ही आप रहें। तहेदिल से मेरी यही विनीत अरदास है आप श्री हरि प्रभु माँ से!

कहाँ कर पाती हूँ आपका धन्यवाद.. सच है कि कलम हाथ में हो न हो, आपके भावों की लड़ियाँ मन ही मन गूँथती रहती हूँ। ज़रूरी नहीं कि क़ासिद के हाथ आपको पतिया भेजूँ। मन तो आपके श्री चरणों में ही लगा रहता है। मेरे जीवन को आपका यह दिव्य प्रसाद है!!

जो प्यारी सी लग्न आपने इसे दी.. आप ही ने अपने प्रेम दीप को हृदय में जलाया ही नहीं, इसमें स्थापित भी करा हुआ है! इसी लौ में इसकी लग्न की उमंग बढ़ती चली जाती है.. जानती हूँ, यह आप ही का करम है व कृपा प्रसाद है।

सच ही कहते हैं, जब भगवद् कृपा हो तो जीवन में कोई अभाव नहीं रह जाता.. क्योंकि जब आपके क़दम इतनी ख़ामोशी से हृदय में चलते हैं तो अपने अनन्त पदचिन्ह हृदय में आप अंकित करते जाते हैं। आप प्रभु माँ के सिवा कौन कर सकता है ऐसा करम! धन्य हैं आप श्री हरि माँ, आप सच ही धन्य हैं!

कैसे आपका धन्यवाद करूँ? आप सद्‌गुरु ने मुझे मुझ से मेरी सच्ची पहचान ही नहीं करवाई.. वस्तुतः अपने आंतर में धकेल कर मेरी सच्ची पहचान कराई व जन्म-जन्म की पहचान भी करा दी! जीवन की सार्थकता का यह भव्य प्रसाद आपने इस हृदय आँचल में भर कर इस कनीज़ को अनुगृहीत किया है। ईश्वर करे, चित्त यूँ ही आपके श्री चरणन् में लगा रहे। यही दुआ है मेरी और अतीव विनम्र निवेदन भी!

आप ही बताईये, हे श्री हरि माँ, कहाँ से लाऊँ वह दिल.. जो तहेदिल से अपने दिलबर का सामगान गाता रहे और कोटि कोटि धन्यवाद करता रहे, स्तुति वन्दना अपने श्री हरि माँ प्रभु जी की भी करता रहे.. और आपका धन्यवाद करता रहे। आपकी वाणी

रूपा आपके मंत्रों की यह साँझ जो दी है आपने, धरोहर रूप में.. पल-पल उससे ही मेरी दिनचर्या जीवन में गुज़रती रहे। आमीन।

हे श्री हरि, परम पूज्य, परम वन्दनीय माँ, आपने सभी को जीवन प्रदान किया है। ज़ाहिर है, देने वाले की कृपा के पीछे जो आपने स्वयं वहन किया है, वह विचारणीय है। अपने आपको देने का अर्थ ही यह है.. आप, अपने आप में से अपना आप काट कर दे देते हैं। उसकी भरपाई कैसे हो..

यह प्रश्न मुझे कचोटता रहता है! एक ओर हैं आप.. जो अपने समेत अपना सभी कुछ दे देते हैं। कुछ भी तो नहीं बचा कर रखते! हम भी इसी समर्पित भाव से अपने समेत अपने को आपके श्री चरणन् में समर्पित करते हुये, कुछ भी बचा कर नहीं रखें.. क्योंकि आपकी इसी सत्यता का तो साक्षात्कार किया है आपके जीवन दर्शन में!

मुझे भी इतनी शक्ति दीजियेगा कि मैं कुछ भी देने में तनिक भी गुरेज़ न करूँ!

यही याद रहे, आपने अपने समेत अपना सभी कुछ देते वक्त कुछ भी तो बचा कर नहीं रखा। परमात्मा करे, आपके जीवन का यह परम सत्य हृदय से स्वीकार करते हुये यह अलख ज्योत जलती रहे। आप ही की करुण-कृपा से यह साक्षात्कार करने का आपने अवसर दिया है। ईश्वर करे, यह अलख ज्योति जीवन में सदा जलती रहे व आप श्री हरि माँ प्रभु जी आंतर में सदा जीवित रहें! हरि ओऽम् तत्तसत.

आप श्री हरि परम पूज्य माँ का जन्मदिवस है। इसलिए आपके श्री चरणन् में, आप ही से पाया, आपके श्री चरणन् में ही समर्पित करती हूँ.. असीम श्रद्धा, भक्ति व प्रेम से! यह यादें commitment हैं हमारी, आपके साक्षित्व में! जो जीवन आपने दिया है, उसे आप ही में ढलान मिलती रहे व आप ही का जीवन-प्रसाद बँटता रहे। यही हृदय से निकली प्रार्थना को आपके श्री चरणन् में धरते हुये, आपको आपके जन्मदिन की मुबारक देती हूँ बहुत बहुत सच्चे व सुच्चे हृदय से!

"आप जीयो हज़ारों साल, साल के दिन हों पचास हज़ार!" हम सभी को आपके जन्मदिन व जन्म की ढेरों ढेरों मुबारक! ईश्वर करे, यह अर्पणा आश्रम बहुत फले-फूले व विस्तार पाये! हरि ओऽम् तत्तसत!

'मैं' मैं न रहे! रहे तो बस इक तू ही तू रहे!

कैसे आपका धन्यवाद करूँ माँ

हरि ओऽम्

लीन होये ही जान सके,
बस एको रे वह ही है!

तदेतत्सत्यं यथा सुदीप्तात्पावकाद् विस्फुलिङ्गाः सहस्रशः प्रभवन्ते सरूपाः।
तथाक्षराद् विविधाः सोम्य भावाः प्रजायन्ते तत्र चैवापियन्ति।।

- मुण्डकोपनिषद् २/१/१

शब्दार्थः

हे प्रिय! वह सत्य यह है; जिस प्रकार प्रज्वलित अग्नि में से उसी के समान रूप वाली हज़ारों चिंगारियाँ नाना प्रकार से प्रकट होती हैं; उसी प्रकार अविनाशी ब्रह्म से नाना प्रकार के भाव उत्पन्न होते हैं; और उसी में विलीन हो जाते हैं।

तत्व विस्तारः

अपर विद्या की कह करी, परा विद्या की अब कहें।
त्याज्य उसे रे कह करी, प्राप्तव्य की अब कहें।।१।।

विस्तृत व्याख्या हो चुकी, कहें रमण यहाँ छोड़ दे।
स्थूल जग में पूर्ण मन, अब भ्रमण तू छोड़ दे।।२।।

प्रारम्भिक साधना हो चुकी, अब उसको तू छोड़ दे।
इष्ट पूर्ति काम पूर्ति, अब भावना तू छोड़ दे।।३।।

स्थूल अनिश्चित जान लिया, क्षणिक क्षणभंगुर जाना।
बाह्य प्रज्ञता विराट्रूप, फल रूप मिथ्या जाना।।४।।

तन लोक को छोड़ दिया, स्पर्श रूप क्षणिक जाना।
पूर्ण जग रूप वैभव, अज्ञान रूप यह भ्रम जाना।।५।।

सत्त्व रूप वह परम रूप, आनन्द रूप को चाहे है।
बाह्य भोग यह छोड़ करी, सत्त्व स्वरूप को चाहे है।।६।।

सत्त्व सार बतलाते हैं, किस विध पूर्ण जग उभरे।
उभर उभर विस्तृत भये, पुनः उसी में लय होये।।७।।

महा प्रज्वलित अग्न सों, चिंगारी रे ज्यों उठे।
सहस्त्रों उमड़ दमक के, पुनः मिटें रे ज्यों उठें।।८।।

उसी विधि उस परम सों, अनेक भाव उभरते हैं।
अमूर्त मूर्त अनेक नाम, रूप वही तो धरते हैं।।९।।

उत्पत्ति उससों पाकर, लीन वहीं हो जाते हैं।
चिंगारी दृष्टांत देई, ब्रह्म यही समझाते हैं।।१०।।

मूल रूप वह परम रूप, ब्रह्म तत्व वह एक है।
उभर उभर पुनः लय होये, बाक़ी रहे वह एक है।।११।।

रेखा वेग सों तन उभरे, चिंगारीवत् जला करे।
रेखा वेग जो ख़त्म होये, तत्व तत्व में लौट पड़े।।१२।।

उपाधि रूप अरी कर्म के, वेग सों ही दर्शाये है।
कर्म वेग जो ख़त्म होये, रूप ठहर ना पाये है।।१३।।

तत्व तत्व में लीन होये, कारण में सब लय होये।
महा प्रलय रे जिस पल हो, अखण्ड में अखण्ड भये।।१४।।

अखण्ड तत्व अखण्ड रहे, रूप धरी धरी नहीं धरे।
स्वप्न में द्रष्टा स्वप्न भये, सब रूप भयी वह नहीं धरे।।१५।।

चिंगारी अग्न में भेद नहीं, गुण तत्व बस एक है।
ब्रह्म जीव में भेद नहीं, मन जानो वह एक है।।१६।।

एक अनेक हैं दर्शाये, माया का यह खेल है।
उपाधि ही तो कारण है, अज्ञान का यह मेल है।।१७।।

अनेक पात्र जो बन आये, आकाश सभी में एक है।
अनेक रूप वह धर के धरे, रूपरहित रहे एक है।।१८।।

नाम रूप उपाधिन् सों, लागे परम अनेक है।
नाम रूप उपाधिन् मिटे, रहे एक का एक है।।१९।।

स्वप्न की मूर्त अनेक लगे, वास्तव में वह एक है।
महा तत्व वह एक रहे, अज्ञानी कहे रे अनेक है।।२०।।

उपादान कारण निमित्त भी, जग का बस वह एक है।
महाकारण कारण भी, सूक्ष्म स्थूल वह एक है।।२१।।

परम सत्त्व वह जान करी, ज्ञातव्य कुछ नहीं रहे।
परम में परम होये करी, प्राप्तव्य कुछ नहीं रहे।।२२।।

अखण्ड रस अनुभव भये, अनुभव परे वह हो जाये।
अद्वैत को क्या वह जानेगा, अद्वैत रस वह हो जाये।।२३।।

तनो संग मनो संग, फिर बुद्धि संग भी नहीं रहे।
नानात्व इस जग का, फिर कहीं भी नहीं रहे।।२४।।

व्यष्टि निज को माने है, इक तन को जो अपनाये।
चिंगारीवत् उभरे यह, पुनः लीन वह हो जाये।।२५।।

आत्म रूप यह जान ले, सत्त्व सार पहचान ले।
परम ज्ञान रे यह ही है, ज्ञातव्य यह जान ले।।२६।।

प्रकाश स्वरूप वह आप ही है, पर मौन उसे ही कहते हैं।
ज्ञान स्रोत भी आप ही है, पर परम मौन रे कहते हैं।।२७।।

गुण पूर्ण वह आप कहें, पर गुणन् से वह है परे।
सर्वगुण सम्पन्न होई, निर्गुणिया ही वह रहे।।२८।।

भावातीत वह कालातीत, कर्मातीत भी वह ही है।
इन्द्रिय अतीत अग्राह्य वह, गुणातीत भी वह ही है।।२९।।

सर्वोपरि सर्वोत्तम, परम तत्व इक वह ही है।
अखण्ड रस रे उसे कहें, राम तत्व रे वह ही है।।३०।।

बार बार वह यही कहें, सत्त्व सार तू जान ले।
परम तत्व है भाव परे, भाव रहित होई जान ले।।३१।।

नाना रूप धरी देखो, चिंगारी रे उभरती है।
क्षण भंगुर ही सब वह है, इक पल को ही उभरती है।।३२।।

परम सत्त्व की ही कहें, उभरे और फिर मिट जाये।
एको गति वा की भी नहीं, अग्निवत् ना मिट जाये।।३३।।

जीव उठे वह आप भये, अहम् पृथक्ता माने है।
अहम् ही है जो एक में, अनेक रूप रे जाने है।।३४।।

सर्व रूप जब जान ले, अखण्ड तत्व रे वह ही है।
लीन होये ही जान सके, बस एको रे वह ही है।।३५।।

पर लीन भये और को' जाने, एक में एक ही हो जाये।
मनोप्रवाह बुद्धि निर्णय, पूर्ण ही जब खो जाये।।३६।।

मौन में आकर अनुभव हो, मिलन मौन में होता है।
पूजन जिसको तुम कहो, जानो मौन ही होता है।।३७।।

चिंगारी अरे तन धरी, स्थूल जग रे यह ही है।
इक पल उभरे लय होये, स्थूल गति रे यह ही है।।३८।।

जीव भाव जो तेरा है, अब अहंकार तू छोड़ दे।
जड़ है निज को मान रहा, मिथ्यात्व तू छोड़ दे।।३९।।

बाह्य रूप तेरा नहीं, कर्मन् का वह खेल है।
रेखा ने संस्कार का, देख किया रे मेल है।।४०।।

तव गोत्र नहीं कोई जन्म नहीं, एक अंग नहीं तेरा है।
जग विचरण का इस तन का, रंग ढंग नहीं तेरा है।।४१।।

तन की बतियाँ मत सोचो, बाह्य प्रज्ञता छोड़ दे।
आन्तर प्रज्ञ री हो करी, मौन से नाता जोड़ दे।।४२।।

कारण में जब जा पहुँचे, प्रज्ञा जागृत हो जाये।
कर्माशय तू जान ले, त्रिकाल दर्शी हो जाये।।४३।।

आत्म कृपा तब ही हो, निज स्वरूप तू जान ले।
सत्त्व तत्व त्रिकाल परे, परे होई कर जान ले।।४४।।

ईश्वर भाव है संस्कार, विश्वात्म रे वही भये।
संस्कार ही कर्मन् के, विश्व रूप हैं धर रहे।।४५।।

समष्टि संस्कार कहो, बाह्य विश्व का रूप धरे।
व्यष्टि संस्कार कहो, तन स्वरूप रे आप धरे।।४६।।

रूप रूप तू क्या देखे, जड़ माया का खेल है।
परम तत्व तो रे बहु परे, हो सके ना मेल है।।४७।।

अनित्य तत्व मायिक यह, अज्ञान आवरण रे छोड़ दे।
जड़ भाव कर्म अरे पूर्ण तन, जड़ जग को अब छोड़ दे।।४८।।

१०-९-६१

आत्म-समर्पण का महायज्ञ

परम पूज्य माँ के पिता जी, श्री सी.एल.आनन्द, बार-एट-लॉ थे.. पंजाब विश्वविद्यालय में ३० वर्ष तक वह लॉ कॉलिज के अध्यक्ष रहे। वह एक महान शास्त्रज्ञ, विद्वान, उच्च विचारों वाले असाधारण मानसिक शक्ति सम्पन्न व्यक्ति थे..

श्री सी.एल. आनन्द (परम पूज्य माँ के पिता जी) द्वारा प्रस्तुत यह लेख,
'अर्पणा पुष्पांजलि' अगस्त १९७४ के अंक (MA'S GOLDEN JUBILEE) में से लिया गया है।

ऐसा लगता है मानो, परम पूज्य माँ के जीवन के स्वरूप को ही अथर्व वेद काण्ड ४, सूक्त १४ में, भगवान ने आत्म-समर्पण महायज्ञ का स्वरूप बताया है। आजकल यही यज्ञ

हमारी आँखों के सामने मधुबन में 'माँ' के जीवन में हो रहा है। जो लोग इस वैदिक यज्ञ के स्वरूप को नहीं जानते, उनके लिये 'माँ' के जीवन के इस गूढ़ पहलू को समझ पाना एक कठिन बात है।

यज्ञ का वेद में अर्थ है - 'त्याग' अर्थात् विश्व की भलाई के लिये अपने धन, द्रव्य, ज्ञान और शक्ति आदि का दान करना। गीता में भगवान ने यज्ञ के भाव को सृष्टि का आधार बताया है, जो प्रजापति ने सृष्टि की उत्पत्ति के साथ ही मनुष्यों के हृदय में उनके कल्याण के लिये उत्पन्न किया।

विश्व की भलाई के लिये मनुष्य जितने कर्म करता है, वे सब यज्ञ कहलाते हैं। इस प्रकार का यज्ञ वेदानुसार मनुष्य के जीवन में वायु और जल की शुद्धि के लिये और निरोगता के लिये स्थूल अग्नियों की आहुतियों से आरम्भ होता है। यह आत्म-समर्पण के मार्ग पर स्वार्थ के त्याग की पहली पौड़ी (प्रथम चरण) है।

वेद के मन्त्रों में 'स्वाहा' का जो शब्द आता है.. उसका अर्थ यह है, 'मैं अपने स्वार्थ को त्यागता हूँ। यह यज्ञ में दी हुई आहुति मैं दूसरों की भलाई के लिये देता हूँ, अपने भोग बढ़ाने के लिये नहीं!'

इस विधि से मनुष्य अपने जीवन में समर्पण की शक्ति को आहिस्ता-आहिस्ता बढ़ाता जाता है। इस उन्नति के मार्ग पर चलता हुआ जब साधक अपना सर्वस्व विश्व की भलाई के लिये अर्पण कर देता है तो उसके जीवन की उन्नति की प्रथम मंज़िल समाप्त होती जाती है। मगर इस प्रकार का भौतिक यज्ञ जो सब मनुष्यों के गृहस्थ के जीवन में आवश्यक है, निचली श्रेणी का कहा है।

यह साधक के जीवन को सुखी बनाने और स्वर्ग प्राप्ति का साधन है.. मगर मोक्ष, जिसे वेद में आत्म-ज्योति कहा है, उसका द्वार नहीं। वह स्थिति उससे बहुत ऊँची है

और उसका मार्ग भी कठिन है, यद्यपि नामुमकिन नहीं! जैसे गीता में भगवान ने कहा है कि बहुतेरे जीव अपनी हिम्मत से उस अवस्था को पा चुके हैं जो भगवान का अपना स्वरूप है।

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः।।७/१९।।

श्रीमद्भगवद्गीता ४/३१

आत्म-ज्योति वेद में वह अवस्था है, जहाँ साधक के कर्म दैवी और स्वाभाविक बन जाते हैं। उसमें किसी प्रकार की फलप्राप्ति और स्वर्ग की भी इच्छा नहीं रहती। इस अवस्था के स्थूल रूप को वेद में भयानक शब्दों में बताया गया है। मगर ऐसा प्रतीत होता है, कि उर्वशी (परम पूज्य माँ) ने (ताकि ऐसा न हो कि साधक डर जाए) इस मंज़िल का वर्णन तनो दान के नाम से अपने सत्संगों में कहा है। साधक के जीवन में आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग पर, यह आत्म-समर्पण की आख़िरी मंज़िल है। इसे वेद की भाषा में आत्म-ज्योति कहा है। यह वह अवस्था है, जहाँ साधक अपने सम्पूर्ण शरीर को, सब अंगों समेत विश्व रूप भगवान को अर्पण कर देता है। अब उसमें अपनाने का भाव ख़त्म हो जाता है। इस पूर्ण आहुति के पश्चात् वह केवल अजन्मा अमृत स्वरूप आत्मा रह जाता है। जिसके विषय में भगवान ने गीता में कहा है -

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम्।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम।।

श्रीमद्भगवद्गीता ४/३१

जिस अवस्था में साधक सभी कुछ, जिसे वह अपनाता है, भगवान के अर्पण नहीं कर देता, आत्म-समर्पण का यज्ञ पूर्ण नहीं होता। पूर्ण आहुति ही ब्रह्म प्राप्ति का द्वार है। वेद में उसका वर्णन इस प्रकार है-

'साधक भगवान से कहता है -

जो कुछ मेरा है, उसको लेकर तथा सब शरीर, सब इन्द्रियाँ, सब आत्म शक्तियाँ, सब पुरुषार्थ ले करके तुझे प्राप्त होता हूँ और तुझमें प्रविष्ट होता हूँ।'

जब साधक ने विश्व की भलाई के लिये अपने तन का भी यज्ञ कर दिया, तो व्यक्ति रूप से उठकर वह विश्व रूप बन जाता है। उसकी आत्मा जो पहले व्यक्ति रूप में अपने ही शरीर में थी, सारे विश्व में फैल जाती है। उसके व्यक्तिगत, पारिवारिक और जाति भाव सब मिट जाते हैं। जब सारा विश्व ही उसका शरीर बन गया तो जहाँ कहीं वह दुःख देखता है, दुखिया को सुखी बनाने का यत्न करता है। गीता में ऐसे विश्व रूप बने हुए आत्मा को योग-युक्त कहा है। वह सब प्राणियों को समदृष्टि से देखता है। अपने आप सब भूतों में रहता हुआ और सब प्राणियों को अपने में देखता है। जीवन की इस उच्च अवस्था

पर पहुँचने के लिये महायज्ञ चाहिए.. जिसका वेद में इस प्रकार वर्णन है -

'पूर्व दिशा के लिए इस अजन्मा का सिर अर्पण है, दक्षिण दिशा के लिए दक्षिण करवा, पश्चिम दिशा के लिये मेरा पिछला भाग अर्पण है - उत्तर दिशा के लिए उत्तर करवा, ऊर्ध्व दिशा के लिए मेरी पीठ की रीढ़ अर्पण है, ध्रुव दिशा के लिए मेरा पेट, मध्य दिशा के लिये मेरा मध्य भाग अर्पण है। इस प्रकार सब अँगों से विश्व रूप बना हुआ मैं परमात्मा को सब तरफ से अनुभव करता हूँ।'

वेदों में इन मन्त्रों का तात्पर्य जीव को समझने के लिए यह है कि भगवान ने जो इस संसार में उसे मानुषिक चोला दिया है वह केवल उसके अपने भोग और सुख के लिए नहीं, सब विश्व की भलाई के लिए दिया है। जब तक यह विश्व को समर्पण नहीं होता, यज्ञ पूर्ण नहीं होगा।

वेद का कहना है कि अजन्मा जीवात्मा ब्रह्म के तेज से प्रकट हुआ है और कर्मगति के कारण जन्म-मरण के चक्र में फँसा हुआ है। उसने अग्नि रूप आत्म-ज्योति को फिर से प्राप्त करना है। पृथ्वी से अंतरिक्ष की ओर बढ़ना है। वहाँ से द्यौ लोक को, फिर आख़िरी पौड़ी आत्म-ज्योति की है, जो देवों का स्थान है। जो कोई इस वेद में बताए हुई आत्मिक उन्नति के मार्ग को नहीं जानता, वह "माँ" के वर्तमान स्वरूप के इस पहलू को नहीं समझ सकता, जहाँ अपने सुख-दुःख की कोई चिन्ता नहीं रही, और जीवन का केवलमात्र प्रयोजन सब दुखियों को सुखी बनाना उनका स्वभाव बन चुका है।

यह दूसरों की सेवा की बात नहीं। अब माँ की आत्मा का क्षेत्र अपना तन नहीं - वह तो महायज्ञ में भगवान को समर्पण हो चुका है। अब सारा विश्व उसका क्षेत्र बन गया है। वेद में साधक कहता है, 'मैं परमात्मा की यज्ञ से पूजा करता हूँ। और स्वर्गलोक से ऊपर चढ़ कर आत्म-ज्योति की अवस्था को प्राप्त होता हूँ..'

यही इस समय माँ के वर्तमान स्वरूप का एक पहलू है।❖

एक पत्र, पूज्य माँ के नाम..

डॉ. जे.के. महता द्वारा प्रस्तुत

यह लेख 'अर्पणा पुष्पांजलि' के अगस्त १९९१ अंक में से लिया गया है.

परम पावनी माँ,

जिसे हम आप का साधनाकाल कहते हैं, वह तो हमारी भूल है.. आज जब आप को देख रहे हैं तो समझ आ रहा है, यह तो आप की साधना की पूर्ति का प्रमाण था कि आप ने प्रतिदिन हमारे घर के मन्दिर में आना स्वीकार किया.. और फिर ९ मार्च १९५८ को प्रथम बेला आपने वहाँ क़दम धरा। मुझे आप को पहचानने में पाँच साल लग गये। वह मेरी अज्ञानता ही तो थी.. वास्तव में आप का हमारे घर में साधना के लिये क़दम धरना ही आप की साधन-सिद्धि का प्रमाण था!

इससे पहले जहाँ तक भी हम आप के जीवन को देखते हैं तो श्रीमद्भगवद्गीता कथित स्थितप्रज्ञ, गुणातीत, ज्ञानी, भक्त, योगी, सब के ही लक्षण तो आप में प्रमाणित हैं। विपरीत और अनुकूल में समभाव, दूसरे के दुःख निवारण और कल्याणार्थ आप के तन का "सर्वभूत हिते रतः" होने का प्रमाण; यह सब तो हमारे घर में आने से पहले की आप की स्थिति थी।

उस समय मैं आपको कहा करता था, 'आप की जीवन प्रणाली ग़लत है।' आप ने तो एक बार भी नहीं कहा कि प्रणाली तो मेरी ग़लत है.. बल्कि जो मैं कहता गया आप उसकी प्रतिमा बनते चले गये। यह प्रमाण तो आप के नितान्त संग अभाव और अहं मिटाव का था। हम सब को भगवान की इच्छा जान कर, आपने अपना आप झुका दिया.. और हमारे ही कल्याण में लग गये।

मुझे पाँच साल (जिसे हम आप का साधना काल समझते हैं), हक़ीक़त में, आप को पहचानने में लग गये.. मैंने आपको अपनी मान्यता सों पाँच साल तक तोल-तोल कर पाया कि आप का कहीं कोई संग है ही नहीं.. वहाँ तो अहं का नितान्त अभाव है।

२ अक्तूबर १९६२ को जब मैंने कहा, "आप सिद्धि पा चुके हैं, आप आत्मा में समा चुके हैं.." उस पर आप हँस पड़े और कहने लगे, "मैं तो आज भी वही हूँ जो पाँच साल पूर्व आप के घर आने से पहले थी।" मैं आश्चर्यचकित सा आपको देखता ही रह गया। मैंने पूछा, "फिर यह साधना, जो आप ने करी.. जिस का परिणाम आज हम सब के सामने है, वह क्या थी? अपने सहज भाव में आप कहने लगे, "बाबासर, मैंने तो वही किया, जो आप कहते गये।" तब मुझे ज्ञात हुआ, जिस को मैं साधना समझता था, आप वही रूप मेरे सामने धरते गये। स्थूल जगत त्याग को ही मैं वैराग्य और संन्यास समझता था और आप मेरी मान्यता अनुसार स्थूल जगत का त्याग करते चले गये और अन्त में संन्यास धारण कर ऋषिकेश को चल दिये।

मेरे पूछने पर आप कहने लगे, "मुझ में तो कोई परिवर्तन नहीं आया। आप का सम्पर्क पाने से पहले जो मेरा जीवन था, आज भी वही है।" उस समय तो यह बात समझ में नहीं आई पर आज कुछ कुछ समझ रहा हूँ.. यह आप की मेरे प्रति तद्रूपता थी। आप ने तो कभी नहीं जताया कि मेरी साधना की मान्यता ग़लत है। मेरे तद्रूप होकर, जो मैं करना तो चाहता था, पर कर नहीं पा रहा था जीवन में.. आपने वैसा ही करते हुए, मुझे शक्ति दी.. मेरा उत्साह बढ़ाया.. ताकि मैं भी आपनी मान्यता अनुसार वही कर सकूँ। जिसके परिणामस्वरूप मैं भी अपना जग वैभव त्याग कर, सपरिवार आप के चरणों में आ बैठा।

यह तो मैं आज समझा हूँ कि जो भी सामने आ जाये उसके साथ तद्रूपता ही वास्तविक साधना है। उस तद्रूपता में साधक अपने आप को भूल जाता है और साधना में परिपक्वता प्राप्त करने पर अपनी तन रूपा "मैं", अपना व्यक्तित्व उसे नितान्त ही भूल जाता है। वह तन, मन, बुद्धि के समूह से ऊपर उठ जाता है.. उसका तन रूपा इस अपने आप में, कोई संग मोह नहीं रहता.. यही वास्तविक संन्यास है! वह दूसरे के तद्रूप होकर अज्ञानियों की तरह वर्तता हुआ उन्हें सत् पथ पर ले जाता है। उसका जीवन ही गीता के इस श्लोक की व्याख्या है:

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्याद् विद्वांस्तथासक्तः चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम्।।(३/२५)

अर्थात् - *"हे अर्जुन! कर्म में आसक्त हुए अज्ञानीजन जैसे कर्म करते हैं, वैसे ही अनासक्त हुआ विद्वान भी लोक शिक्षा को चाहता हुआ कर्म करे।"*

मैं तो अपना घरबार, कर्त्तव्य, धर्म सब छोड़ आया था। पूज्य माँ! आप के लाख मना करने पर भी, कि मुझे आना नहीं चाहिए, मैं आ ही गया.. तत्पश्चात् जग के प्रति मेरे जो भी कर्त्तव्य थे, वह आप स्वयं निभाते रहे और मुझको प्रेरित करते हुए मुझ से भी करवाते रहे। धीरे धीरे आप पुनः मुझे जग में कर्त्तव्य के पथ पर स्थापित करवा कर वहाँ निष्कामता और निःसंगता का अभ्यास करवाने लगे।

यह ही सत्गुरु का प्रमाण है। वह अपनी शरण में आये साधक की मान्यता को ठुकराता नहीं.. उसके स्तर पर आ, उसके तद्रूप हो कर, अपने जीवन के प्रमाण राही उसे सत की ओर आकर्षित करता है और धीरे धीरे सत् पथ भी अपने ही जीवन की उपमा से खोलता जाता है।❖

'जब धर्म की ग्लानि होती है..
और अधर्म की वृद्धि होती है,
तब तब मैं प्रकट होता हूँ!'

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

श्रीमद्भगवद्गीता ४/७

यहाँ भगवान बताते हैं कि उनका जन्म कब होता है! वह कहते हैं, हे अर्जुन!

शब्दार्थः

१. **निस्सन्देह जब धर्म की ग्लानि होती है**
२. **और अधर्म की वृद्धि होती है,**
३. **तब तब मैं प्रकट होता हूँ।**

तत्व विस्तारः

भगवान कहते हैं, 'मैं जन्म लेता हूँ':

१. जब सत्य का अभाव हो जाता है।
२. जब किसी को भी 'कर्तव्य क्या है'.. यह समझ नहीं आता।
३. लोगों में यज्ञमय दृष्टि नहीं रहती।
४. जब दया धर्म मिट जाते हैं।
५. जब धर्म मर्यादा भंजित होती है।
६. जब संसार में शास्त्र विहित आचरण नहीं रहता लोगों का!
७. जब सत् धर्म व्यर्थ हो जाते हैं और स्वार्थ के लिये ज्ञानी लोग ज्ञान को बेचने लग जाते हैं।
८. जब सत् का स्वरूप सब भूलने लगते हैं।

९. जब साधु भी रूप में टिक जाते हैं और सत्य स्वरूप भूल जाते हैं।

१०.जब मोह के कारण सत्य बिकने लग जाता है।

११.जब साधु भी योग नहीं समझ सकते।

१२.जब साधु और शास्त्र ज्ञानी भी शास्त्रों का अर्थ बता नहीं पाते।

१३.जब वह मोह और क्रोध रूप हो जाते हैं और लोभ से आवृत हो जाते हैं।

१४.जब साधु कर्म को नहीं समझ सकते और कर्तव्य को छोड़ देते हैं।

१५.जब साधु 'योग है क्या?' यह नहीं समझते और उसे मिथ्या अर्थ दे देते हैं।

१६.जब साधु भ्रमित होकर तनत्व भाव त्याग के लिये तनो बन्धन-वर्धक कर्म करने लगते हैं।

१७.जब यज्ञमय जीवन की जगह, वे पाप करने लग जाते हैं।

नन्हीं! यही धर्म की हानि है। इसे फिर से समझ!

धर्म की हानि तब होती है, जब ज्ञान केवल शाब्दिक मनोविनोद रह जाता है, शास्त्रीय सिद्धान्त तथा सहज जीवन को हम पृथक् पृथक् कर देते हैं और जब साधुता के अनुष्ठान करने की चाहना वाले लोग अपने सहज कर्तव्य भी छोड़ देते हैं।

क) तब साधारण लोगों को सहज जीवन में साधुता का प्रमाण मिलना कठिन हो जाता है।

ख) साधारण लोग तब यह समझने लग जाते हैं कि साधारण जीवन में तत्व का अनुष्ठान हो ही नहीं सकता।

ग) संसारी और साधु, इनके दो अलग अलग लोक बन जाते हैं, तब पाप और बढ़ने लगते हैं।

घ) जब साधु और संन्यासी कर्तव्यपरायणता भूल जाते हैं, तब तो वे स्वयं ही पापी हो जाते हैं।

ङ) जब साधु और संन्यासी निष्काम जीवन व्यतीत नहीं करते, तब पाप बढ़ जाते हैं और धर्म का नाश हो जाता है।

च) जब साधु और संन्यासी, साधुता और संन्यास भाव को बिन त्यागे, साधारण लोगों के साथ रहते हुए भी साधारण कार्य नहीं करते, तब धर्म नष्ट होने लगता है।

छ) जब साधु और संन्यासी अपने सहज गुणों को तन के सहित संसार को नहीं दे देते और अपने गुणों को दबा लेते हैं, तब तो मानो वह संसार से भागवत् गुणों की चोरी करते हैं। वास्तव में, यह भगवान की भी चोरी करते हैं; क्योंकि जो लोग नित्य निष्काम तथा निरासक्त हुए भगवद गुण बहा सकते हैं, वही भगवान के गुण चुराकर, संसार को देने से मानो इनकार कर देते हैं।

ज) जब साधु और संन्यासी गण, जिन्हें अपने प्रति उदासीन होना था, वह दूसरों के दुःख-सुख के प्रति उदासीन हो जाते हैं, तब संसार में धर्म मिटने लगता है और पाप बढ़ने लगता है।

झ) जब साधु और संन्यासीगण, साधारण जीवन में, साधारण लोगों को अत्याचार से बचाने की जगह, स्वयं आँख मूंद कर, निरपेक्षता का ढोंग रचाते है, तो वास्तव में वे स्वयं

पाप के भागी बन जाते हैं। तब धर्म का नाश होने लगता है।

नन्हीं! धर्म का पतन साधारण जीवों के कारण इतना नहीं होता। यह तो साधुता गुमानी तथा संन्यास का अर्थ न जानने वाले संन्यासियों के कारण होता है।

भगवान कहते हैं, '**जब जब धर्म का नाश हो जाता है, तब तब ही मैं रूप धरता हूँ।**'

नन्हीं! ध्यान से देख! जब जब भगवान जन्म लेते हैं, ऐसा लगता है कि वह एक नया धर्म कायम कर देते हैं। ऐसी कोई बात नहीं होती। वास्तव में उस काल में धर्मपरायण लोगों में जो त्रुटियाँ रह जाती हैं, भगवान उन्हीं का समाधान करने के लिये जन्म लेते हैं।

जितने भी अवतारी पुरुष हैं, इनकी ओर यदि ध्यान से देखें, तो तुम्हें यह सब स्वरूप के दृष्टिकोण से समान दिखेंगे, उनमें भेद केवल उनके जन्म के समय की सभ्यता तथा मान्यता के कारण होता है। उनके जीवन या रेखाओं में भेद होता है, उनके वाक् उस समय की समस्याओं के कारण भिन्न होते हैं परन्तु उन सबकी निजी स्थिति सम होती है। उन सबका दृष्टिकोण सम होता है।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।

श्रीमद्भगवद्गीता ४/८

भगवान अपने जन्म का कारण बताते हुए कहने लगे, किः

शब्दार्थः

१. **साधु के उद्धार के लिये,**
२. **दुष्ट कर्म करने वालों के मिटाव के लिये, (तथा)**
३. **धर्म की स्थापना करने के लिये**
४. **मैं युग युगान्तर में जन्म लेता हूँ।**

तत्व विस्तारः

१. मुक्ति चाहुक गण को साधक कहते हैं।
२. परम में जो टिकना चाहें, वे साधु हैं।
३. आत्मवान जो बनना चाहें, उन्हें साधु कहते हैं।
४. असत्य त्याग जो करना चाहें, उन्हें साधु कहते हैं।
५. जो कर्तव्य भाव कभी न त्यजना चाहें, उन्हें साधु कहते हैं।
६. देहात्म बुद्धि त्याग जो करना चाहें, उन्हें साधु कहते हैं।
७. संग त्याग जो करना चाहें, वे साधु हैं।
८. आत्म विवेक जो चाहें, वे साधु हैं।
९. वे साधु हैं जो परम सों योग चाहते हैं, यानि आत्मवान बनना चाहते हैं।
१०. जो मोह, मम, अहंकार त्यजना चाहते हैं, उन्हें साधु कहते हैं।

साधु का दुश्मन कौन है?

क) इनकी राहों में विघ्न क्या है?

ख) इनको पथ भ्रमित कौन करता है?

ग) इनका महा वैरी कौन है?

घ) साधु को कौन दूषित करता है?

ङ) वह ज्ञान समझ क्यों नहीं पाता, कहाँ ग़लती हो जाती है?

च) साधुओं को विचलित कौन कर देता है उनके पथ से?

छ) वे गर तत्व पे ध्यान लगायें तो ध्यान कौन हर लेता है?

ज) जो पथ भ्रष्ट कर देता है, वह साधु का वैरी है। वह वैरी कौन है, इसे समझ ले।

साधुओं की साधुता का हरण कौन कर लेता है, इसे समझ ले। उस वैरी से बचाने के लिये ही तो भगवान का जन्म होता है। उस वैरी से संरक्षण के लिये, तथा उससे मुक्त कराने के लिये ही भगवान का जन्म होता है, यानि, भगवान प्रकट हो जाते हैं:

भगवान स्वयं ही कह कर आये हैं कि:

१. महापापी क्रोध ही महा वैरी है।

२. जो तुमसे पाप करवाता है, वह तेरा अपना ही लोभ है।

३. ज्ञानी गण का नित्य वैरी काम है, यह भगवान स्वयं कह कर आये हैं।

४. कामना को ही ज्ञान विज्ञान विध्वंसक भगवान ने कहा।

५. साधक का दुर्जन शत्रु 'काम' को ही कहा है भगवान ने।

इस दुष्कृत ने ही तो साधुगण की साधुता को अनेक बार लूटा है, इसके दुष्ट कर्म ने ही तो:

क) जो यज्ञ रूप प्रसाद मिलना था जग को, उसे भी लूट लिया है।

ख) साधु के सतीत्व को लूट लिया है।

ग) साधु का विवेक हनन किया है।

घ) धर्म पथ से विमुख किया है अनेक साधुओं को।

ङ) योग की राह से विभ्रान्त कर दिया है साधु को।

च) साधु को भरमा दिया है बार बार।

छ) साधु का पतन करा दिया है।

आत्म-स्वरूप अभिलाषी को इन्हीं वैरियों ने अनेकों बार राहों में ही गिरा दिया।

१. इनका हनन करने के लिये भगवान जन्म लेते हैं।

२. इनसे साधु को बचाने के लिये भगवान जन्म लेते हैं।

३. उसे पथ पे पुनः लगाने के लिये भगवान जन्म लेते हैं।

४. साधु के मनो अरि को मिटाने के लिये भगवान पुनः जन्म लेते हैं।

५. झुकाव की राह सुझाने के लिये भगवान पुनः जन्म लेते हैं।

६. साधुगण का अहं मिटाने के लिये भगवान पुनः जन्म लेते हैं।

७. मोह से मुक्त कराने के लिये भगवान पुनः जन्म लेते हैं।

८. साधुता के संरक्षण के लिये भगवान पुनः जन्म लेते हैं, असाधु विनाश को जन्म नहीं लेते।

९. साधु में जो असाधुता होती है, उसका दमन करने के लिये भगवान प्रकट होते हैं।

साधु आत्मवान बनने का प्रयत्न करता है। जिसकी आत्मवान बनने की आकांक्षा ही नहीं, उसे साधारण जीव कहते हैं।

क) साधारण जीव के शत्रु वे होते हैं, जो उस पर अत्याचार करते हैं। साधु का शत्रु कोई नहीं होता। वह तो अपने ही 'मैं' भाव से शत्रुता किये होते हैं।

ख) साधारण जीव अपमानित होता है, साधु का अपमान नहीं होता। वह तो तन ही नहीं, सो उनका अपमान कैसे?

ग) साधु का अभ्यास भी साधुता है। साधु तो आत्मवान बनने का अभ्यास कर रहे होते हैं। वे बाह्य वैरियों की परवाह नहीं करते।

घ) साधु औरों के अहंकार, दर्प, दम्भपूर्ण व्यवहार से नित्य निर्भय होते हैं। वे तो अपने अहंकार, दर्प और दम्भपूर्ण व्यवहार से डरते हैं।

ङ) जो तनो त्याग के प्रयत्न रूप अभ्यास कर रहे होते हैं, उनका संरक्षण तो उनके अपने ही मोह और मम भाव से होना होता है।

च) स्थूल रूप में दुश्मन तो उनके लिये साधन सामग्री बन जाते हैं।

छ) स्थूल रूप में दुश्मन तो उनको सज्जन ही लगते हैं।

नन्हीं! साधुओं को तो उनके आन्तरिक दुश्मन सताते हैं। भगवान इन पाप करवाने वाली वृत्तियों का नाश करने के लिये ही उत्पन्न होते हैं।

भगवान ने कहा कि 'मैं दूषित कर्म करने वालों के नाश के लिये और धर्म स्थापना करने के लिये जन्म लेता हूँ।'

नन्हीं! भगवान ने कहा था कि 'गुण ही कर्म करते हैं; वे लोग मूर्ख हैं जो अपने आपको कर्ता मानते हैं।'

फिर यह जान ले कि जब तक आसक्ति है, तब तक ही गुण दोष-युक्त हैं। जब तक आसक्ति है, तब तक ही गुण पाप पूर्ण हैं। जब आसक्ति नहीं रहे और जीव निष्काम भाव से यज्ञमय कर्म करे, तब वह अपने पूर्ण गुण दूसरों के कल्याण अर्थ इस्तेमाल करेगा; तब उसके दुष्कर्म ख़त्म हो जायेंगे। यानि, दुष्टता करने वाले का नाश हो ही जायेगा।

मेरी नन्हीं! आत्मवान बनने की चाहुक! इस कथनी में भगवान ने मानो अपने जीवन का रहस्य प्रकट कर दिया हो। यह समझ लेना कि भगवान अत्याचारी तथा दुष्टों को मार देते हैं, बड़ी भारी भूल है। संसार भर के दुष्ट गणों को मारने के लिये भगवान का जन्म नहीं होता; न ही उसका कहीं कोई भी प्रमाण है। वरना जब जब भगवान ने जन्म लिया, तब तब पुनः सत् स्थापित हो गया होता।

नन्हीं! भगवान का जन्म साधुओं के लिये होता है। भगवान का जन्म संन्यासियों के उद्धार के लिये होता है। भगवान का जन्म साधुता के संरक्षण के लिये होता है।

क) साधुओं के दुश्मन, साधु आप ही होते हैं।

ख) साधकों के दुश्मन भी साधक आप ही होते हैं।

ग) जब जब साधकगण ज्ञान में रमण करने लग जाते हैं और उस ज्ञान

को जीवन में अवतरित नहीं करते, तब तब धर्म का नाश होने लगता है।

अब आगे समझ कि भगवान धर्म को कैसे स्थापित करते हैं?

१. वह साधारण जीवन में रहते हुए प्रमाण सहित सम्पूर्ण शास्त्र की व्याख्या बन जाते हैं, यानि उनका जीवन ही सम्पूर्ण शास्त्र की व्याख्या होता है।

२. शास्त्र को समझना हो, तो भगवान के जीवन राही समझने के यत्न करो।

३. तनत्व भाव अभाव पूर्ण, साधारण जीवन में कैसे रहते हैं, यह उनके जीवन से समझने की कोशिश करो।

४. अहंकार रहितता तथा कर्तृत्व भाव रहितता क्या है, उनके जीवन से समझने की कोशिश करो।

५. उदासीन का प्रेम समझना हो, तो भगवान के जीवन को समझने के यत्न करो।

६. कर्मों में कर्तापन का अभाव भगवान के जीवन में देखो।

७. संन्यास के स्वरूप तथा रूप को भगवान के जीवन में देखो।

८. नित्य ब्रह्मचारी भगवान का गृहस्थ जीवन देखो।

९. जिनका कोई कर्तव्य नहीं, उन भगवान को जीवन में कर्तव्य निभाते देखो।

१०. नित्य तृप्त को चेष्टा करते देखो।

११. नन्हीं! दिव्य प्रकाश स्वरूप आत्म तत्व सार को जीवन में साधारण सा रूप धरते देखो।

१२. साक्षात् निराकार भगवान कृष्ण को अर्जुन का सारथी बनते देखो।

१३. वास्तव में तनत्व भाव रहित तथा परम आत्म में स्थित के सम्पूर्ण चिह्न तथा गुण, भगवान अपने जीवन में प्रकट करते हैं।

जो साधु भगवान का नाम लेते हैं और भगवान से स्वयं प्रेम करते हैं, वे अपने साधारण जीवन में भगवान को साक्षी मान कर हर परिस्थिति में वही करना चाहेंगे, जो, यदि, उनकी जगह उस परिस्थिति में भगवान होते, तो वह करते।

ऐसे साधुगण का जीवनः

क) भगवान जैसे गुणों से भर जायेगा।

ख) भगवान के जीवन जैसा यज्ञमय बन जायेगा।

ग) भगवान जैसा नित्य निरासक्त हो जायेगा।

घ) भगवान जैसा नित्य निष्काम और कर्मवान हो जायेगा।

ङ) भगवान जैसा ममत्व भाव रहित, प्रेम-स्वरूप ही हो जायेगा।

च) भगवान जैसा नित्य उदासीन, कर्तव्यपरायण ही हो जायेगा।

छ) भगवान जैसा दैवी सम्पदा पूर्ण ही बन जायेगा।

ज) भगवान जैसा गुणातीत बन जायेगा।

नन्हीं! उनको देख कर और उनके जीवन में इस ज्ञान को प्रत्यक्ष हुआ जान कर साधु लोग उन्हीं का अनुसरण करते हुए, अपनी साधुता का संरक्षण कर सकते हैं और साधुता घातक गुणों का नाश हो सकता है। ❖

भगवान जन्म

वा इच्छा है कोई नहीं, साधुता की माँग है..

परम पूज्य माँ के पिता जी, अपनी निजी आध्यात्मिक उन्नति व शास्त्र स्पष्टीकरण के लिये मन्दिर में आकर माँ से प्रश्न पूछा करते थे। (वह मन्दिर में अपनी ही बेटी को 'माँ' कह पुकारते थे।)

पूछे जाने पर प्रश्नकर्ता के प्रश्न को पूज्य माँ भगवान के चरणों में ज्यों का त्यों धर देते थे और प्रसादवत् उत्तर पूज्य माँ के मुखारविन्द से बह जाता था। यही उनका दिव्य प्रज्ञा प्रवाह है!

पिता जी

पूर्ण ब्रह्म और अंश में क्या भेद है? पुराणों में उसको अंश अवतार कहा है। भगवान जन्म कैसे लेते हैं? क्या स्वयं इच्छा से जन्म लेते हैं? गीता में श्लोक आये हैं, जहाँ कहा है, 'मैं प्रकृति से पृथक् हूँ, मैं पुरुषोत्तम हूँ, जीव पुरुष है..', ये सब बातें कुछ समझ में नहीं आतीं। आप इस पर प्रकाश डालें!

सारांश

अंश का जन्म समष्टि पुकार तथा साधु की चाह के कारण होता है। साधु धर्म विनाश और अपने भावों की विपरीतता के दर्शन करके भगवान को पुकारता है। वह पूर्ण का अंश रूप धारण करके, जग में आकर भी

ब्रह्म के मौन भाव में रहते हैं। वह जब जब जन्म लेते हैं तो माया बधित होकर आते हैं। समष्टि की पुकार उनकी चाह सी दर्शाती है और जैसी जग की पुकार हो, वह वैसा ही रूप धर कर आते हैं।

प्रश्न अर्पण

पूर्ण में और अंश में, भेद कहाँ क्या होता है।
अवतार जन्म क्योंकर हो, निज इच्छा से क्या होता है।।१।।

हो जीव पुरुष पर श्याम स्वयं, ख़ुद को पुरुषोत्तम कहते हैं।
समझाओ तो समझ पड़े, यह सब क्या हमें कहते हैं।।२।।

तत्व ज्ञान

भगवान जन्म की पूछो तुम, क्या निज इच्छा से जन्मे।
पूर्ण की पूर्णता में, अंश रूप बन के जन्मे।।३।।

योग माया से प्रकटें, योगी ने योग किया ब्रह्म से।
समष्टि पुकार ने फल दिया, अवतारी पुरुष ब्रह्म पुत्र भये।।४।।

बहु साधु बहु पूजा करी, सत् से प्रीत लगायी जब।
पथ भूले और तड़प गये, राम को आना होगा तब।।५।।

पुरुषों में पुरुषोत्तम बन, जीवन प्रमाण वह देते हैं।
साधु पुरुषोत्तम बन जाये, स्थिति राज़ दर्शाते हैं।।६।।

अखिल भूत प्राणी गण का, ईश्वर भी वह आप हैं।
जो सत् माने वह रूप धरे, यह फलदे भी आप हैं।।७।।

पूर्ण की पूर्णता में, पूर्ण का ही विधान है।
बहु मिली जब माँग करें, विधान की वह माँग है।।८।।

वा इच्छा है कोई नहीं, साधुता की माँग है।
बहुमत से सत् अनुयायी गण, की ही यह माँग है।।९।।

सत् की माँग यह सत् से है, सत् पूर्ण हृदय ने करी।
ऐसी माँग परिणाम रूप, सत् ने देख यह रूप धरी।।१०।।

ज्ञान-विज्ञान सहित

अपने चाहे जन्म हो, ऐसी बात वहाँ कोई नहीं।
अखण्ड मौन सत्त्व की, पुकार हो सके नहीं नहीं।।११।।

आप तो पूर्ण में पूर्ण, पूर्ण ही हो जाये हैं।
चाह जिसको वह कहते हैं, वह पूर्ण में खो जाये हैं।।१२।।

पूर्ण में इक अंश मिला, फिर पूर्ण कौन और अंश है क्या।
सागर में बूँद जो जाये मिली, तब बूँद है क्या सागर है क्या।।१३।।

फिर ऊष्णता जब आये, पुकार उसे क्या मानिये।
सागर पर जब धूप पड़े, वाष्प उठे यह जानिये।।१४।।

बदरी बन ही जायेगी, पुकार उष्णता की थी।
को' बुँदिया पुनि रूप धरा, को' बुँदिया पुनि बरस गई।।१५।।

बूँद न जाने क्या हुआ, पूर्ण से वह आई है।
उष्णता ही पुकार थी, वा कारण उठी आई है।।१६।।

उसे बूँद नहीं राम कहें, उसे ब्रह्म का ही अंश कहें।
सागर बुँदिया गुण भेद है जो, अंश ब्रह्म में भेद रहे।।१७।।

जीव की तू अब सुन मना, तनोधारी ही जीव है।
जिसे तनो संग हो मनो संग, हो बुद्धि संग वह जीव है।।१८।।

जो निज को तन माने है, तन से उठ नहीं पाये है।
वही जानो वह अहं भरा, ही पुरुष कहलाये है।।१९।।

जो निज तन से हुआ परे, वह पुरुषोत्तम हो जाये है।
पुरुषों में वह उत्तम है, इस कारण नाम यह पाये है।।२०।।

यह जन्म तू जान मना, समष्टि पुकार से होता है।
ज्ञान है वा पुकार नहीं, साधु की चाह से होता है।।२१।।

इक साधु पुकारे जब, वह रूप धरी कर आते हैं।
भावन् में ही सुन मना, उसे दर्शन दे वह जाते हैं।।२२।।

बहु संत बहु पीड़ित हो, जब तड़प करी बुलाते हैं।
विपरीत रूप जब जग धरे, विपरीतता में बुलाते हैं।।२३।।

धर्म विनाश जब जब हो, बहु जीव तड़प ही जाते हैं।
विपरीतता देख के भावन् की, वह राम राम बुलाते हैं।।२४।।

जैसा राम वह चाहें तब, वैसा रूप धरी आते हैं।
अपनी रेखा बँधे नहीं, जग रेखा लेकर आते हैं।।२५।।

वह पूर्ण जग का रूप नहीं, पूर्ण की पुकार नहीं।
कुछ ने उन्हें पुकारा है, सबने पुकारा उन्हें नहीं।।२६।।

वह पूर्ण से पूर्ण ही, पूर्ण बनी के आये हैं।
ब्रह्म का अंश बन करके, अंश के गुण वह लाये हैं।।२७।।

वह राम जन्म तब लेते हैं, वा पुकार ही जन्म लेती है।
क्यों न कहें समष्टि की, पुकार रूप धर लेती है।।२८।।

कहें माया बधित वह आते हैं, उनके बस में कुछ नहीं।
तन जो करे सो किया करे, राम के बस में कुछ नहीं।।२९।।

राम कहा वा नाम जो है, नाम लिये सब हो जाये।
राम के संग सीता बसे, वा का हरण भी हो जाये।।३०।।

राम स्वयं भी राज्य त्यजी, बनवासी थे हो गये।
सीता लक्ष्मण तुम जानो, उनके साथी हो गये।।३१।।

कौन सुख पाया उनने, विपरीतता में नित्य बसे।
राम का जीवन साधक तू, पूर्ण चाहे फिर देख ले।।३२।।

पर राम वह हैं वह ब्रह्म के, अंश ही कहलाते हैं।
अपने कारण निज चाह से, जन्म नहीं वह पाते हैं।।३३।।

पूर्ण की चाह है उनकी चाह, जिसने चाहा उनने चाहा।
जैसी मान्यता थी जग की, वैसा रूप उनने पाया।।३४।।

ऐसी बात गर जान भी लो, तो जान करी के क्या होगा।
राम को सामने लाये धरो, प्रमाण सामने तब होगा।।३५।।

दृष्ट रूप में तन मन बुद्धि, रेखा बधित वह पुरुष है।
पर जीवत्व और 'मैं' रहित, विधान रचित पुरुषोत्तम है।।३६।।

जीव में मोह बस इतना है, वह निज को तन माने है।
तनो जन्म और तनो रूप, वह अपना ही जाने है।।३७।।

माया का खिलवाड़ यह, और माया निज को माने है।
तनोपति यह समझे नहीं, तन ही निज को जाने है।।३८।।

जग में तन विचरण करे, दीखे प्रभावित हो जाये।
तनो मान मिले तो वह समझे, मान्वित वह हो जाये।।३९।।

तन के संग सहवास करे, वह तन आप ही हो जाये।
माटी पुतला यह तन है, वह माटी आप ही हो जाये।।४०।।

इक बुत से क्या संग किया, वह बुत आप ही हो जाये।
माटी के गुण जो भी हैं, वह गुण बधित तब हो जाये।।४१।।

फिर बिन कहे कहे तन मैं हूँ, अजपा जाप होने लगा।
बाक़ी जीवन सम्पूर्ण, इक बुत का राज्य होने लगा।।४२।।

अब बुत को जग में जा के, प्रदर्शित वह मन करता है।
सब नमन करें इस बुत को, चाह यह मन में धरता है।।४३।।

यह भावना जीव की है, बुत को जीव ही कहते है।
बुत के संगी जो भी हैं, उनको जीव ही कहते हैं।।४४।।

बुत से उठे जो मन से उठे, बुद्धि से जो उठ जाये।
इनसों संगी न होये, वह पुरुषोत्तम कहलाये।।४५।।

वा की चाहना कोई नहीं, जग चाह वह पूर्ण करते हैं।
अपनी माँग वहाँ कोई नहीं, वह सबके भाव चित्त धरते हैं।।४६।।

वहाँ चित्त नहीं कोई चाह नहीं, वहाँ लग्न नहीं कोई राग नहीं।
मैं यह करूँ मैं वह करूँ, ऐसा भी कोई भाव नहीं।।४७।।

उद्धार करूँ मैं इस जग का, ऐसी बात भी कोई नहीं।
संहार करूँ मैं दुष्टन् का, ऐसी भावना कोई नहीं।।४८।।

संहारक गर वह बन जाये, तो द्वेष भी वहाँ होयेगा।
उद्धारक गर वह बन जाये, मोहक मोहित भी होयेगा।।४९।।

ऐसी भावना वहाँ नहीं, यह दोष उन पे मत मढ़ो।
अंश को जानो मनोगुण से, वह तो बहुत परे ही हो।।५०।।

गर ऐसी बात तू समझ ले, तो अंश जान ही जाओगे।
अंश जान के क्या होगा, उस वंश के ही हो जाओगे।।५१।।

साधक की ओर से प्रार्थना

ब्रह्म के गुण तोपे हों, तो कौन तुला तुझे तोल सके।
जीवन भर तुझे तोलें राम, अंत में तेरा नाम लें।।५२।।

तब पहचान न पाऊँगा, तुम हृदय में मोरे आ जाओ।
स्थूल में समझ न पाऊँगा, आंतर में ही आ जाओ।।५३।।

तू जन्म जो ले और अंश बनी, सामने जब तू आ जाये।
ब्रह्म का तू अंश है, कैसे किस विध दिख पाये।।५४।।

माया आवृत माया बधित, तू जन्म ले तू स्वयं कहे।
मायापति ही माया का, चाकर भी तू आप भये।।५५।।

'मैं' बिन रेखा तेरी हो, विधान जो तुझपे राज्य करे।
दूजे के तू तद्रूप भये, तो कौन तुझे पहचान सके।।५६।।

तेरे आंतर क्या है कस समझें, तू अंश है यह भी कस समझें।
यह क्या माया है कस समझें, माया से उठें यह कस समझें।।५७।।

गर तुम सामने आ ही गये, कैसे पहचान मैं पाऊँगा।
करुणापूर्ण करुणा करो, तुमको जान मैं जाऊँगा।।५८।।

❖ ❖ ❖

स्वर्गदायिनी अग्न-विद्या..

(नचिकेत द्वारा त्रै-अग्न ज्ञान की याचना)

पूर्वांश

नचिकेत के प्रथम दो वरों की चर्चा हमने पिछले अंक में की थी। उसने यमराज से अपने पिता की आन्तरिक शान्ति के साथ ही स्वर्गदायिनी अग्नविद्या के ज्ञान की भी याचना की। नचिकेत के शुद्ध चित्त, उसकी बुद्धि की तीक्ष्णता व दृढ़ निश्चय से प्रसन्न होकर यमराज ने अपनी ओर से मान प्रतिष्ठा, और अमरत्व का वर उसको प्रदान किया। अब नचिकेत यमराज से तृतीय वर की प्रार्थना करते हैं।

अपने दोनों वरों व यमराज द्वारा दी गई मान प्रतिष्ठा की माला को प्राप्त करके नचिकेत अति विनम्रभाव में कर जोड़ कर यमराज से तृतीय वर की याचना करने लगे और पूछने लगे –

"तुम जानो सर्ववित्त हो, अपना अनुभव आप कहो।
विज्ञापित मुझको तुम करो, इतनी कृपा आप करो।।

आत्म विज्ञान विषयक रे, प्रश्न अब रे वह करते हैं।
भेद सत् निवृति को, सत्त्व चरण अब धरते हैं।।

मरणोत्तर कहो क्या रे हो, आत्म को गुरुदेव कहो।
आत्म विनशे या अमर रहे, इसको रे मम देव कहो।।

जग में बहुत रे भ्रमण किया, जग को अपनाता रहा।
तन को 'मैं मैं' कह करके, गीत जग के गाता रहा।।

क्षण भंगुर यह जान लिया, तन तो मिटना ही होगा।
उजियारा अरे नयन का, यह तो मिटना ही होगा।।

निश्चित प्रत्यक्ष देख रहा, मृत्यु तो रे आयेगी।
देख देख वह पूछ रहा, फिर 'मैं' गति क्या पायेगी।।"

आत्म विषयक इस प्रश्न को सुनकर यमराज नचिकेत की परीक्षा हेतु उन्हें इस वर से विचलित करने के लिये अनेक प्रलोभन देने लगे। इस पथ को दुर्लभ और दुर्गम बता कर वह नचिकेत का ध्यान अन्य विषयों में आकर्षित करने लगे —

"अन्य वर रे माँग लो, जो माँगो वह पाओगे।
यह तो समझ में ना आये, वँचित वर से रह जाओगे।।

विशाल सामग्री **सुख** की दे, दीर्घ आयुषि कुल ले ले।
पशु गज धेनु अश्व भी, पूर्ण यूँ साम्राज्य तू ले॥

दुर्लभ जिनको जाने है, कामना पूर्ण तू कर ले।
अप्सरायें रथ सहित, आन मान गान संग तू कर ले।।"

दृढ़ निश्चयी नचिकेत को यमराज के इन प्रलोभनों ने अपने निश्चय पर और भी दृढ़ कर दिया और उनकी जिज्ञासा और भी तीव्र हो गई.. 'यदि यह आत्मज्ञान इतना दुर्लभ है, तो मुझे इसके अतिरिक्त कुछ भी नहीं चाहिये!' नचिकेत ने कहा, "आज तो यह सुअवसर मुझे प्राप्त है कि आप जैसे अनुभवी, जीवन में ज्ञान की प्रतिमा रूप गुरु मेरे सम्मुख हैं। आपके अतिरिक्त यह दुर्लभ ज्ञान मुझे और कौन दे सकता है?"

संसार के राज्य, धन, मान, भोग ऐश्वर्य का विवेकपूर्ण विवेचन तो नचिकेत ने पहले ही मृत्यु के साक्षित्व में कर लिया। संसार का कोई भी भोग तो जीव को तृप्त नहीं कर सकता। यह कामना एक ऐसी अग्नि है, जिसमें जितना ईंधन डालो उतनी ही भड़कती है।

यदि दो क्षण के लिये मान ही लें कि सम्पूर्ण कामनाओं की पूर्ति हो गई, तो भी इसका परिणाम क्या है? यमराज स्वयं ही इस सबको मुझसे छीन लेंगे..

"दीर्घायु जितनी भी दो, अंत समय तो आयेगा।
अवधि पूर्ण हो गई, तू भी बचा न पायेगा॥

अस्थिर रूप जब जान लिया, इसकी चाहना कौन करे।
परम तत्व को छोड़ करी, अज्ञान की चाहना कौन करे॥"

इसलिए हे यमराज!

"तोरा शिष्य बनी आया हूँ, मुझको तुम स्वीकार करो।
यही जिज्ञासा लाया हूँ, परम ज्ञान अधिकार रे दो॥

कहो रे कौन हूँ मैं, कहाँ से आया हूँ।
कहाँ को जाऊँगा, यह ठौर न पाया हूँ॥"

नचिकेत की दृढ़ता देखकर यमराज बहुत प्रसन्न हुए, साधक की राह में अनेकों प्रलोभन – भोग ऐश्वर्य, अप्सरायें और सिद्धियाँ आती हैं। स्वर्गलोक की प्राप्ति के उपरान्त आनन्द-लोक में उसका वास होता है। अधिकतर साधकगण इन प्रलोभनों में भरमाकर उस परम लक्ष्य को भूल जाते हैं और पुनः चाह पूर्ति की ओर चल पड़ते हैं। वास्तव में आत्म तत्व के ज्ञान का अधिकारी तो वह ही है जिसे वह कुछ भी आकर्षित न करे और जो बिना विचलित हुए एकटक अपने लक्ष्य की प्राप्ति की ओर अग्रसर रहे। ऐसा दृढ़ निश्चय केवल विवेकपूर्ण विवेचन के परिणामस्वरूप ही उत्पन्न हो सकता है.. पहले ही यदि तीक्ष्ण बुद्धि से विचार करके सत्य-असत्य का निर्णय नहीं किया, तो प्रथम प्रलोभन पर ही साधक विचलित हो जायेगा। नचिकेत इस परीक्षा में पूरे उतरे, इसलिए तो यमराज उनकी सराहना करने लगेः

"निःस्पृह नचिकेत तुम, प्रियकर सुख रे छोड़ दिये।
समस्त विषय लौकिक यह, अलौकिक भी रे छोड़ दिये॥

महा बन्धन त्यज आये, पूर्ण विघ्न रे दूर हुए।
वैराग्य सम्पन्न हो करके, जग विष सों रे दूर हुए॥

सर्वोत्तम अधिकारी तुम, परम सत् तुम जान सको।
परीक्षा यही साधक तेरी, उत्तीर्ण हुए ही जान सको॥"

तत्पश्चात् यमराज नचिकेत को जीवन का मार्मिक सत्य समझाते हुए कहने लगे -

जीवन में दो ही पथ हैं श्रेय और प्रेय! भगवान ने जीव के लिये पूर्ण संसार की रचना करके उसको पूर्ण स्वतंत्रता दे दी है.. वह जिस भी पथ का चाहे अनुसरण कर सकता है। मानो स्वयंवर में दोनों ही वर सामने खड़े हैं, जीव जिसे भी चाहे अपना ले! उचित पथ का अनुसरण करने के लिये सर्वप्रथम इन दोनों पथों का समीक्षण कर लेना अनिवार्य है।

प्रेय पथ –

प्रेय का अर्थ है प्रिय लगने वाला - रुचिकर। जीव सहज में ही अपनी रुचि की पूर्ति चाहता है। तत्काल फल की प्राप्ति उसको आकर्षित करती है, और वह परिणाम को भूल जाता है। संसार में मिलने वाले प्रत्यक्ष सुख, धन, मान, विषय, भोग ऐश्वर्य इनकी प्राप्ति ही उसका ध्येय है –

"प्रेय पथ प्रथम तो प्रिय लगे, दक्षिणायन ओर बढ़े।
अंधियारा जब हो जाये, कृष्ण पक्ष में जीव बसे।।

रुचिकर जग सुख समिधा जो, वा आश्रित वह हो जाये।
उपार्जित भोग समिधा हो, प्रेम चाकर रे हो जाये।।

तत्काल ही जो सुख दे, उसको ही वह चाहते हैं।
अरे क्षणिक ही यह सुख है, समझ नहीं वह पाते हैं।।

प्रत्यक्ष सुख वह चाहते हैं, प्रत्यक्ष को ही वह ध्याते हैं।
पूर्ण इन्द्रिय वीर्य यह जन, भोगन् में लगाते हैं।।

जन्म जरा मृत्यु देखें, अन्य जन जो पाते हैं।
अपनी गति यही होगी, यह समझ न पाते हैं।।

अविद्या रति निज ज्ञान मान, बुद्धि पर इतराते हैं।
आगे फल इच्छुक मूढ़मति, अंधियारे में रहते हैं।।"

विषय भोग और बाह्य सुख देखने में बहुत लुभावने हैं परन्तु इनका परिणाम क्या है-

"मौत दहेज में तू पाये, प्रेय को गर री तू वरे।
अंतवंत ही यह सब है, जिस सुख को री तू वरे।।"

श्रेय पथ –

श्रेय का अर्थ है श्रेष्ठ!

"श्रेय पथ कल्याण पथ कहो, उत्तरायण ओर रे जो बढ़े।
विवेक जिस पल उठी आये, शुक्ल पक्ष में स्थित करे।।

विचार उचित बुद्धि वर्धक, विवेक परिणाम है श्रेय पथ का।
मन श्रेष्ठ भये बुद्धि विशिष्ट, परिणाम में पाये चेतनता।।

कल्याणकर आनन्द दे, परम मिलन राह श्रेय कहें।
सत्त्व को जो वरण करे, भ्रम वर्जक उसे श्रेय कहें।।"

नचिकेत स्वयं एक श्रेय पथिक का आदर्श प्रमाण है। यमराज द्वारा दिया गया कोई भी प्रलोभन उनके विवेकपूर्ण निर्णय को विचलित नहीं कर सका।

नचिकेत की पात्रता की पूर्ण परीक्षा लेकर अब यमराज उनकी जिज्ञासा को शांत करने लगे। नचिकेत जन्म-मरण के रहस्य को जानना चाहते थे। यमराज ने उनको बताया कि जीव का अंतःकरण ही वह आशय है जहाँ सम्पूर्ण संस्कार एकत्रित होते हैं। उन संस्कारों के अनुकूल ही जीव का जन्म और मरण होता है। चाहना और वासना के पात ही इस जीवन वृक्ष को सप्राण करते हैं और अहं ही इसका मूल है। बाह्य पत्तों को काटने से यह वृक्ष ज्यों का त्यों ही बना रहेगा। इससे मुक्त होने के लिए मूल पर प्रहार करना पड़ेगा। यह अहं केवल "ओम्" अर्थात् परम तत्व के आसरे ही भूल सकता है। ओम् जो उस परम तत्व का प्रतीक है, यही साधक का परम अवलम्बन है। उसके ध्यान में ही जीव अपनी 'मैं' को भूल सकता है।

वह अविनाशी तत्व इस विनाशवान तन में वास करता है। यह तन एक रथ है और जीव उसका पति है। इन्द्रियाँ ही इस रथ के अश्व हैं, मन इसकी लगाम है और बुद्धि सारथी है। यदि सारथी कुशल है और लगाम उसके हाथ में खिंची है तो इस रथ को श्रेय पथ पर ले जा कर वह परम धाम तक जा पहुँचेगा। परन्तु यदि सारथी कुशल नहीं और इन्द्रिय रूप अश्व रुचिकर विषय रूपी हरी घास के पीछे घूमते रहे तो निश्चित ही यह रथ टूट जायेगा।

"ज्ञानी जन इक जीव को, रथ का पति रे कहते हैं।
तन ही रथ है माने हैं, रेखा है गति कहते हैं।।

बुद्धि सारथी बैठी, रथ को वही चलाये है।
मन लगाम कर थामे है, जग विचरती जाये है।।

इन्द्रियन् को वह अश्व कहें, विषय पथ पर रमण करें।
जीव तन मन सों बँधे, नाहक इनसों संग करे।।

अश्व गर प्रेय पथ लें, निश्चित पतन रे हो जाये।
श्रेय पथ गर यह अश्व लें, साधना सफ़ल रे हो जाये।।

जाने यह रथ तेरा है, कुछ पल को तेरा साथ है।
देहाध्यासी नहीं रहे, यह तो यम का ग्रास है।।

साधक रे अरे यह तन तो, साधना को ही पाया है।
कुछ पल का साथ तेरा, इस कारण ही आया है।।

बलवत् अश्व प्रवीण सारथी, दक्ष होई के चली चले।
विषय सेवना छोड़ के, परम की ओर रे चली चले।।"

यह रथ ठीक पथ पर क्यों नहीं चलता, क्यों विनाश की ओर प्रवृत्त हो जाता है? साधक की यह समस्या जानते हुए यमराज नचिकेत को इसका राज़ समझाने लगे –

"मन का अरि रे मन ही है, विषय रमणी जो हो जाये।
महा मित्र यह मन भये, गर निरुद्ध रे हो जाये।।

संकल्प विकल्प का आलय यह, भुवन यही है काम का।
मन्दिर यह ही हो जाये, आवाहन हो गर राम का।।

असंयमित चित्त उसका है, अपावन अशुचिव्रती भी वह।
मन विषयन् को ध्याता है, भूले परम पति भी वह।।

मन समाहित हो जाये, परम भाव में ख्रो जाये।
पूर्ण वीर्य और पुरुषार्थ, न्योछावर उस पे हो जाये।।

देख्र रे साधक तुझे कहें, संयमित मन तुम करना रे।
एकाग्रपूर्ण चित्त भये, नियमित इसको करना रे।।

कुशल सारथी वह ही है, नाम में ही जो मग्न रहे।
अश्वन् रथ सों जोड़ कर, राम धाम की ओर चले।।

महा दुर्लभ यह रथ तेरा, सम्भल सम्भल पग धरना रे।
महा बलिष्ठ हैं अश्व तेरे, राम धाम को चलना रे।।"

जीवन के दो पथ , जीव का स्वरूप, उसके पथ की बाधाओं का पूर्ण विस्तार करके यमराज अब नचिकेत को आत्म-तत्व का स्वरूप समझाने लगे। इसका विचार हम अगले अंक में करेंगे।

क्रमशः

अर्पणा मन्दिर

अर्पणा
समाचार पत्र

अर्पणा ट्रस्ट, मधुबन,
करनाल, हरियाणा
अगस्त २०२०

अर्पणा के आयोजन

परम पूज्य माँ का जन्मदिवस समारोह.. ऑनलाइन संचार के माध्यम से

२४-२६ अगस्त २०२० को अर्पणा परिवार एवं समस्त विश्व से अर्पणा के कई मित्र इस ऑनलाइन मंच से जुड़ सके.. जहाँ वे अर्पणा मन्दिर से संचालित किये जा रहे गीता अध्ययन सत्रों से लाभान्वित होने के साथ साथ परम पूज्य माँ की आध्यात्मिक आंतरिक स्थिति को देख कर गदगद हो उठे।

परम पूज्य माँ के जीवन से जुड़ी कुछ यादों की ध्वनि एवं दृश्य (audio visual) द्वारा संवादात्मक प्रस्तुति दी गई जहाँ उनके प्रवचनों, पिछले कई वर्षों में मंचित किये गये नृत्य नाटक और समारोहों की रिकॉर्डिंग देख कर सब के हृदय माँ के साथ बिताये गये उन पलों की सुखद यादों से जुड़ कर आनन्दित हो उठे।

यह अवसर था.. ख़ुशी एवं कृतज्ञतापूर्ण धन्यवाद देने का.. परम पूज्य माँ का हमें इस जीवन में मिलना और हमारे हृदयों में उनका प्यार.. जो हम सबको एक परिवार के रूप में बाँधे हुए है!

एक ख़ूबसूरत अन्तःमन की महक बिखेरतीं.. श्रीमती सूज़न गैंद

डॉ. रघुनंदन गैंद, अध्यक्ष, अर्पणा यू. के., की प्रिय पत्नी डॉ. सूज़न गैंद का १९ अगस्त २०२० को निधन हो गया, जो पिछले कुछ वर्षों से अत्यन्त साहस के साथ कैंसर जैसी घातक बीमारी से जूझ रही थीं।

आंतरिक स्थिरता एवं बेहद मज़बूती के साथ, अपने प्रगतिशील एवं जोश से भरपूर पति, डॉ. रघुनंदन गैंद, के साथ अर्पणा के चिकित्सा एवं अन्य सामाजिक कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रमों में वह अपने ख़ामोश व्यक्तित्व द्वारा हार्दिक योगदान देती रहीं।

अर्पणा के सभी सदस्य इस अद्‌भुत दम्पत्ति के प्रति आभार अभिव्यक्त करते हैं, जिनका हृदय हमेशा ज़रूरतमन्द एवं असहाय व्यक्तियों के लिए धड़कता है।

उनकी विशाल उदारता प्राप्त अनगिनत लाभार्थियों की ओर से, हम सम्मानपूर्वक अपनी हार्दिक श्रदांजलि अर्पित करते हैं।

दिल्ली के कार्यक्रम

अर्पणा में शिक्षण कार्यक्रम

मोलरबन्द स्थित गौतमपुरी, नई दिल्ली, में अर्पणा शिक्षण केन्द्र, ट्यूशन कक्षाएं, नर्सरी कक्षाएं एवं वंचित छात्रों के लिए व्यावसायिक प्रशिक्षण के साथ साथ बच्चों को संगीत, नृत्य और नाटकों इत्यादि की सांस्कृतिक गतिविधियों में भाग लेने के अवसर प्रदान करता है।

कक्षा १२वीं के २०२० के सीबीएसई के परिणाम १३ जुलाई २०२० को घोषित किये गये। अर्पणा के सभी ३८ छात्र सफलतापूर्वक उत्तीर्ण हुए, जिनमें ३६ को प्रथम श्रेणी अंक प्राप्त हुए।

मानविकी में, विजय लक्ष्मी ९२.४% के साथ पहले स्थान पर रही। विज्ञान में, आकाश ने कुल ९४.८% एवं राजनीति शास्त्र में लक्षिका ने ९०% अंक प्राप्त किये।

सीबीएसई की परीक्षा में १२वीं कक्षा के छात्रों को उनके उत्कृष्ट परिणामों के लिए, २७ जुलाई को प्रमाण-पत्र दिये गये एवं ईएसएसईएल फाउंडेशन की अध्यक्ष श्रीमती रेवा नय्यर द्वारा सबसे अधिक अंक प्राप्त करने वाले ३ मेधावी छात्रों को ५०००/- रुपये प्रत्येक प्रदान किये गये।

मानविकी में सबसे अधिक अंक प्राप्त करने वाली विजय लक्ष्मी अपने ७ जनों के परिवार के साथ गौतमपुरी में रहती है। उसके पिता चाय बेच कर जीवन निर्वाह करते हैं। ३ वर्ष की आयु से उसने अर्पणा की कक्षाओं में भाग लेना आरम्भ किया। एक सुदृढ़ नींव बनाते हुए ५००/- रुपये की मासिक छात्रवृत्ति (पुस्तकों और स्टेशनरी के लिए) अर्पणा द्वारा ८वीं कक्षा के उपरांत से प्राप्त करी। अपने शिक्षकों के मार्गदर्शन एवं सहायता से वह उत्कृष्ट हुई। अब वह दिल्ली विश्वविद्यालय में दाख़िला प्राप्त करने एवं शिक्षक बनने की आकांक्षा रखती हैं।

विजय लक्ष्मी अपनी उत्कृष्टता के लिए सम्मानित की गई।

कोविड-१९ के कठिन समय में भी अर्पणा द्वारा शैक्षिक कार्यक्रम

अर्पणा के शिक्षकों ने प्राथमिक एवं मध्य कक्षाओं की, व्हाट्सएप के माध्यम से शिक्षा जारी रखी। वरिष्ठ छात्रों को भी इन्टरनेट के माध्यम से पढ़ाया जा रहा है।

अभी के लिए, छात्रों का एम एस फॉर्म बहुविकल्पी प्रश्नों का उपयोग करके ऑनलाइन मूल्यांकन किया जाएगा। आगामी आंतरिक परीक्षाओं के लिए, बच्चों का ऑनलाइन परीक्षण किया जाएगा।

अर्पणा अपने शैक्षिक कार्यक्रमों में सहायता करने के लिए अवीवा पीएलसी, यू.के., एस्सेल फाउंडेशन, नई दिल्ली, टेक्निप इंडिया, केयरिंग हैंड फॉर चिल्ड्रन, यूएसए एवं अर्पणा कनाडा का अत्यन्त आभारी है।

ग्रामीण सशक्तिकरण

कोविड-१९ के समय में हमारे हरियाणा के गाँव

ग्रामीण हरियाणा में, सावधानीपूर्वक सामाजिक दूरियाँ बनाये रखते हुए, स्वयं सहायता समूहों की बैठकें फिर से शुरु की गई हैं। अर्पणा स्टाफ़ द्वारा समूह के सदस्यों को नियमित रूप से व्हाट्सएप मैसेज भेजे जा रहे हैं, जहाँ उन्हें सामाजिक दूरी के मापदंड और सावधानियों के विषय में सूचित किया जाता है।

बैठकों में सभी महिलाएं :

१. मास्क पहनती हैं
२. बैठने में ६ फुट की दूरी बनाये रखती हैं और
३. प्रवेश करते समय और वापिस जाते समय अपने हाथ अच्छी प्रकार से धोती हैं,

जिसके लिए सैनिटाइज़र और हाथ धोने के लिए सुविधाएं उपलब्ध कराई जाती हैं।

अर्पणा दिवस का उत्सव

हमेशा की तरह, ग्रामीण महिलाएं २६ अगस्त, परम पूज्य माँ के जन्मदिवस को मनाने के लिए बहुत पहले से तैयारी करने लग जाती हैं.. कोविड-१९ के कारण इस बारी वे अर्पणा आश्रम में एकत्रित न होकर, सभी स्वतंत्र रूप से अपने अपने १०० गाँवों में ही उत्सव मना रही हैं।

अर्पणा अस्पताल

ज़रूरतमन्द लोगों के लिए आशा की एक किरण लिए..

राम निवास गाँव बल्ला का एक दिहाड़ीदार मज़दूर है, जो करनाल में अकेले रहता है क्योंकि उसके परिवार में और कोई नहीं है। २ महीने तक धुंधली दृष्टि होने पर उसके पड़ोसी ने उसे अर्पणा अस्पताल जाने की सलाह दी। राम निवास २५ जुलाई को अर्पणा अस्पताल आया जहाँ नेत्र रोग विशेषज्ञ ने उसकी जाँच की। उसकी बाईं आँख में मोतियाबिन्द था, जिसके लिए उसे ऑपरेशन की सलाह दी गई। अपनी आर्थिक तंगी के कारण उसने ऑपरेशन कराने से इनकार कर दिया। इसके उपरांत उसे बताया गया कि यहाँ ज़रूरतमन्दों के लिए निःशुल्क इलाज किया जाता है और ऑपरेशन के लिए उससे पैसे नहीं लिये जायेंगे। उसके सफल ऑपरेशन के बाद राम निवास की आँखों की रोशनी वापिस आ गई और वह अर्पणा अस्पताल में पाई उत्कृष्ट देख-भाल के लिए बहुत आभारी था।

अर्पणा, अस्पताल के कार्यों में सहायता के लिए टाइड्ज़ फाउंडेशन (यूएसए), बैजनाथ भंडारी पब्लिक चैरिटेबल ट्रस्ट, नई दिल्ली एवं अर्पणा कनाडा का अत्यन्त आभारी है।

हिमाचल की वादियों से..

कोविड-१९ प्रतिबंधों के बाद गतिविधियाँ सावधानीपूर्वक शुरु की गईं

- **ओपीडी क्लिनिक**, अर्पणा चिकित्सा केन्द्र बकरोटा में लॉकडाउन के दौरान रोज़ चलाया गया।
- **गजनोई केन्द्र** से ग्रामीण विकास गतिविधियाँ एक जुलाई से प्रारम्भ की गई।
- **किसान समूहों** द्वारा छोटी छोटी बैठकें शुरु की गईं हैं जहाँ सामाजिक दूरी बनाये रखने के मापदंड अपनाये जा रहे हैं।
- **सिलाई और शिल्प कक्षाएं** ४ दूरस्थ जतकारी गाँव के केन्द्रों में फिर से आरम्भ की गईं। इन्हें पिछले मार्च में ही खोला गया था लेकिन लॉकडाउन के समय सब बन्द करना पड़ा। ४५ दिन के प्रशिक्षण में ६७ उत्साहपूर्ण महिलाएं और लड़कियाँ महिलाओं के सूट और बच्चों के कपड़े और साथ ही साथ स्वेटर, मोज़े, मफलर आदि बुनना भी सीख रही हैं।

अर्पणा में हम सब महिलाओं के सशक्तिकरण हेतु अमूल्य समर्थन के लिए टाइड्ज़ फाउंडेशन (यूएसए), सफेरा फाउंडेशन (यू.के.), अर्पणा कनाडा, बी.एन. भंडारी पब्लिक चेरिटेबल ट्रस्ट (नई दिल्ली) और श्री रवींद्र बहल (नई दिल्ली) के बहुत आभारी हैं।

Your compassionate support sustains Arpana's Services

Arpana Trust and Arpana Research & Charities Trust are both approved under Section 80G of the Income Tax Act, 1961, giving 50% tax relief for donors in India.
FCRA Registration No. for Arpana Trust is 172310001
FCRA Registration No. for Arpana Research & Charities Trust is 172310002

Send your contribution for dissemination of humane values & medical and community welfare services in Delhi to:

Arpana Trust, Madhuban, Karnal, Haryana 132037

Send your contributions for health & development services in Haryana & Himachal to:

Arpana Research & Charities Trust, Madhuban, Karnal, Haryana 132037

Send contributions in USA to:

Mr. Vinod Prakash, President, IDRF, 5821 Mossrock Drive, North Bethesda, MD 20852
Mr. Jagjit Singh, AID for Indian Development, 84 Stuart Court, Los Altos, CA 94022-2249

Send contributions to Arpana Canada:

c/o Mrs. Sue Bhanot, 7 Scarlett Drive, Brampton, Ontario L6Y 3S9, Canada

Please let us know by email or telephone, whenever you transfer funds to Arpana.

Information & Resources Office: 91-184-2390905 **Executive Director:** 91-9818600644
emails: **at@arpana.org and arct@arpana.org**

Contact person: Mrs. Aruna Dayal, Director Development. Mobile 91-9991687310
Websites: **www.arpana.org** **www.arpanaservices.org**

दुर्लभ होती हैं ऐसी आत्माएं..
जो अपने से भी ज़्यादा 'दूसरे' के विषय में सोचती हैं!

चित्र में दाईं ओर श्रीमती सूज़न गैंद, परम पूज्य माँ एवं अन्य

डॉ. श्रीमती सूज़न गैंद, डॉ. रघुनंदन गैंद, अध्यक्ष, अर्पणा यू. के., की प्रिय पत्नी १९ अगस्त २०२० को स्वर्ग सिधार गईं। पिछले कुछ वर्षों से वह कैंसर जैसी घातक बीमारी के साथ साहसपूर्वक जूझ रही थीं।

अर्पणा के चिकित्सा एवं अन्य सामाजिक कल्याण सम्बन्धी कार्यक्रमों में वह तन, मन, धन से योगदान देती रहीं।

वह अपनी उदारता, प्रेम, देख-भाल एवं आंतरिक आध्यात्मिक शक्ति की सुंदर ख़ुशबू हमारे दिलों में छोड़ गई हैं.. जिसका अनुभव हमने पिछले कई दशकों से किया है। अर्पणा में हम सब इस ख़ूबसूरत अन्तःमन वाले व्यक्तित्व का हार्दिक आभार प्रकट करते हैं, जिनके निधन के कारण अर्पणा में एक शून्य सा बन गया है..

कई वर्ष पूर्व, परम पूज्य माँ के साथ परिवार के कुछ सदस्यों को यू. के. की यात्रा करने एवं उनके ख़ूबसूरत घर, मिल्टन केन्ज़, में ठहरने का सौभाग्य प्राप्त हुआ। आज उस समय की कई यादें उभर कर आ रही हैं! वह एक उत्तम मेज़बान थीं.. बेहद गरम-जोशी के साथ हम सब का स्वागत किया एवं परम पूज्य माँ की अत्यन्त प्रेममयी देख-भाल करते हुए उन्होंने हमारी उस यात्रा के उद्देश्य को पूरा करने के लिए हर सम्भव प्रयास किया।

उनका अपने पति, डॉ रघु गैंद के प्रति चरम प्रेम व सेवाभाव देखने का हमें परम सौभाग्य मिला.. सदैव उनके अंग-संग रहते हुए, वह उनकी हरेक आवश्यकता पूरी करती रही एवं उनकी शारीरिक कठिनाइयों में भी हर पल उनके साथ रहीं।

अर्पणा से हम सभी इस अद्‌भुत दम्पत्ति के प्रति आभार अभिव्यक्त करते हैं, जिनका हृदय हमेशा ज़रूरतमन्द एवं असहाय व्यक्तियों के लिए धड़कता है।

ईश्वर उनकी दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करें। हम सभी अर्पणा के सदस्य अपनी अतीव प्रिय सूज़न गैंद को कृतज्ञतापूर्ण नमन करते हैं जो ईश्वर की योजना के अन्तर्गत अपने नए गंतव्य की ओर यात्रा को प्रस्थान कर चुकी हैं। ❖